गोलालारीय समाज का मुखपत्र
RNI No. MPHIN/2008/26873
No. MP/ICD/1252/2015-2017 सेवा में,
मासिक गोलालारीय दर्शन
golalariya_darshan@yahoo.in
गोलालारीय दर्शन यहां भी देख सकते है – www.golalariya.com
लेट पोस्टिंग
अपनों के साथ अपनी बातें
जो भरा नहीं हैं भावों से, बहती जिसमें रसधार नहीं। हृदय नहीं पत्थर हैं वो, जिसे समाज से प्यार नहीं।
वर्ष : 7 अंक : 2 पृष्ठ संख्या : 8 माह – 16 सितम्बर 2015 सहयोग राशी – आजीवन सदस्य बनें ।

सल्लेखना या संथारा आत्महत्या नहीं आत्मसाधना है ।

अभी हाल ही में किसी जीव द्वारा संलेखना या संथारा जो कि जैनियों की साधना का चरमोत्कर्ष है, साधना का लक्ष्य है, फल है को आत्महत्या सिद्ध करके हाइकोर्ट में केस जीता है । यहाँ तक कि संथारा या संलेखना को सती प्रथा के समान कहकर उसे कुप्रथा कहा गया है। तो आईये हम पहले समझे प्रथा या कुप्रथा क्या होती है । जब समाज में किसी परिस्थितिवश किसी क्रिया को आरम्भ किया जाता है और उस क्रिया को समाज के गणमान्य व्यक्तियों द्वारा उस परिस्थिति विशेष में उसे स्वीकृति प्रदान की जाती है तो धीरे धीरे वह प्रथा (बहुत समय तक चलते रहने के कारण) का रुप ले लेती है । किन्तु आगे चलकर उस परिस्थिति विशेष के समाप्त होने पर जब उस क्रिया का कोई औचित्य नहीं रह जाता उस क्रिया से नुकसान होने लग जाये तो वह कुप्रथा कहलाती है । ऐसे में प्रबुद्धजनों द्वारा उसको खत्म करने का प्रयास किया जाता है और खत्म किया जाना चाहिये । जैसे सती प्रथा, दहेज प्रथा आदि। सती प्रथा का आरम्भ एक परिस्थिति विशेष में हुआ था जब मुगलो द्वारा मराठाओं पर आक्रमण कर उनकी स्त्रियों से दुराचार करने का प्रयत्न किया गया तो उन्होंने अपनी अस्मिता को बचाने के लिए अग्नि में कूदकर अपने प्राणों की बलि देना उचित समझा क्योंकि उस समय अपनी अस्मिता को बचाने का उनके पास कोई दूसरा उपाय नहीं सूझता था । और इस प्रथा को मराठा समाज के गणमान्य और सामान्य सभी समाजजनों के द्वारा मान्यता दे दी गयी। और धीरे धीरे जब बहुत समय तक ऐसी परिस्थिति बनी रही और औरतों द्वारा उनके पति के युद्ध में वीरगति को प्राप्त हो जाने पर अग्नि में कूद जाने की क्रिया चलती रही तो उसने एक प्रथा का रूप ले लिया। किन्तु आगे चलकर अंग्रेजों के समय राजा राममोहन राय जो कि एक समाज सेवी थे ने इसके दुष्प्रभावों को समझा और उसे कुप्रथा घोषित कर इसे पूर्णत: खत्म करने का बीड़ा उठाया और खत्म भी किया जो कि उचित ही था । तो ऐसे जन्म लेती है प्रथा या कुप्रथा । किन्तु संलेखना या संथारा कोई परिस्थिति वश आरम्भ की हुयी कोई क्रिया नहीं है अपितु अनादि काल से संतजनों द्वारा जीवन भर की गयी अपनी साधना के फल को पाने के लिये धारण किया गया संयम है। जिस प्रकार संसार शरीर और भोगों की नश्वरता को जानकर वैराग्य धारण कर अपने आत्मस्वरूप को पाने का प्रयास किया जाता है (जो कि अविनश्वर है)। उसी प्रकार मृत्यु के सत्य को पहचानकर कि मृत्यु या मरण कुछ और नहीं अपितु वस्त्र के समान एक शरीर को त्याग कर दूसरे शरीर को धारण करना है और ऐसा निश्चय हो जाने पर जिस प्रकार वस्त्र के जीर्ण शीर्ण हो जाने पर उसके प्रति ममत्व को त्याग कर हम उसका रखरखाव व देखभाल बंद कर देते है और अंत में उसका त्याग कर नया वस्त्र धारण कर लेते है बस यही प्रक्रिया हम अपने शरीर के साथ अपनाते है । जब तह यह स्वस्थ है काम करने योग्य है तब तक तो हम उसका पोषण करते है, रखरखाव करते है, भोजन पानी देते है किन्तु जब वह पूर्णत: जीर्ण शीर्ण हो जाता है तो उसके प्रति ममत्व को त्याग कर उसका रखरखाव बंद करके अपनी आत्मा जो कि अविनश्वर है, शाश्वत है की ओर अपनी दृष्टि कर लेते है। इस भावना में न तो शरीर को खत्म करने की भावना है और न ही उससे छुटकारा पाने की। अपितु जब तक वह हमारे साथ है तब तक धीरे धीरे उसकी आवश्यकता के अनुरूप ही उसे भोजन पानी देते रहते है । किन्तु बहुत अधिक जीर्ण शीर्ण हो जाने पर शरीर स्वयं भोजन पानी आदि ग्रहण करना बंद कर देता है । यदि हम जबरदस्ती उसे भोजन पानी आदि देते है तो अजीर्ण हो जाता है कई अन्य रोगों के होने की संभावना भी हो जाती है एवं मरण तक होने की संभावना भी रहती है। इसीलिये डाक्टर के निर्देश पर मरणासन्न व्यक्ति का आहार, पानी आदि धीरे धीरे कम या बंद कर दिया जाता है अंत में उसे ग्लूकोज़ फिर दवाईयों आदि पर ही उसे रखा जाता है। तो क्या इसे हम डाक्टर के निर्देश में की गयी आत्महत्या कह सकते है ? क्या अंत समय में जब शरीर स्वयं ही भोजन, पानी आदि ग्रहण नहीं कर रहा है ऐसी परिस्थिति होने पर भी उसे भोजन, पानी आदि देते रहना जीवन है ? अगर इसका नाम जीवन है तो भोजन पानी आदि देते रहने पर भी व्यक्ति का मरण क्यो हो जाता है ? और ग्रहण कर सकने में समर्थ न होने पर भी उसे भोजन पानी आदि देते रहने से मरण हो जाये तो क्या ये आत्महत्या नहीं कहलायेगी ? निश्चित कहलायेगी यदि जिसने इस प्रक्रिया को समझ लिया प्रकृति के इस सत्य को समझ लिया और समझदारी दिखाकर समय रहते शरीर का पोषण बंद कर दिया तो वह शरीर को तो छोड़ता है किन्तु मरण के दु:ख या वेदना को प्राप्त नहीं होता । एक समय के बाद शरीर तो छूटना ही है । यह हमारे हाथ में है कि हम उसे वेदना के साथ, दु:ख के साथ, पीड़ा के साथ, हाय हाय करते हुए छोड़े या हर्ष के साथ, समझदारी के साथ उसका साक्षात्कार करते हुए उत्साहपूर्वक पुराने कपड़े छोड़ने में समान छोड़े ।

बस यही स्वाभाविक प्रक्रिया ही अपनायी जाती है संलेखना में । जिसे धारण करना हर किसी के बस की बात नहीं है । जन्म महोत्सव तो सभी मनाते है पर मृत्यु को महोत्सव के रूप में बिरले ही मना पाते है । यह वही कर सकता है जिसने

शेष पृष्ठ 8 पर....

गोलालारीय दर्शन समाज के 4500 परिवारों तक नियमित भेजा जा रहा है। हमारे द्वारा पूर्व में भेजे गये पतों पर ही पत्रिका नियमित रूप से भेजी जा रही है ।
संभव है डाक व्यवस्था या आपका पता सही न होने के कारण पत्रिका आपको व आपके रिश्तेदारों तक पत्रिका नहीं पहुंचती है तो उनका नाम व पता पोस्टकार्ड पर लिखकर पत्रिका कार्यालय पर भेज देवें ।
संपर्क करे – 9407453066 पर दोप. 4 से रात्रि 10 तक संपर्क कर सकते है या अपना पता हमें वाट्स एप्प या एसएमएस कर सकते है ।